

# श्री दत्तामृत

श्री श्री श्री दत्त स्वामी विरचितम

## श्री दत्त स्वामी के दिव्य प्रवचन :

- 1) शक्ति के तीन प्रकार हैं वाक (वाणी ),मन और क्रिया (कर्म) । जहाँ इन शक्तियों की आवश्यकता है ,वहाँ इन का प्रयोग करो। मैं (भगवान) मना नहीं करता हूँ। परंतु इन शक्तियों का दुरुपयोग करने के बजाय शक्ति के इन तीनों रूपों का मेरी (भगवान की) आराधना के लिए प्रयोग करो। उदा. के लिए एक रुपया तुम्हारे पास है। उस से कुछ खरीद कर खाना चाहते हो तो खालो। मना नहीं करते या उसे बचाकर रखो। लेकिन उसे अनावश्यक चीज के लिए व्यर्थ रूप में क्यों खर्च करोगे? उसके बजाय मेरी हुण्डी में डालने के लिए बोल रहा हूँ ।
- 2) आवश्यक काम होने के बाद जब खाली समय मिलता है तब तुम अपनी शक्ति को मेरी आराधना(भगवान की) में प्रयोग करो। उदा . के लिए खाना बनाते समय क्रिया और मन दो शक्तियों का प्रयोग होता है। वाणी से काम नहीं है ना,तब तुम भगवान का नाम स्मरण करते हुए बाकी दो शक्तियों के सहारे खाना पकाओ।
- 3) पूजा समय के बदले में उस की शक्ति की विशिष्टता है। उस शक्ति को बढ़ाकर उस स्तर पर समय का सदुपयोग करना है। अर्थात् भगवान के ऊपर तीव्ररूप में अत्यधिक प्यार दिखाना चाहिए। इस प्रकार भक्ति में तीव्रता पाने के बाद,इसी तीव्रता को हर समय प्रयोग करते हुए आराधना के लिए समय का सदुपयोग करना चाहिए। उदा . के लिए एक जगह 30 दिन काम करेंगे तो वेतन रु. 100 मिलते हैं ,दूसरी जगह 4 दिन काम करेंगे तो 400रु . देते हैं । वैसे ही और एक जगह 30 दिन काम करने से रु. 3000/- देते हैं । ये तीसरी नौकरी में रोज रु. 100 मिल रहे हैं ना!यही उत्तम है। ऐसे ही अपनी साधना को तीव्र करके ,पूरा समय उसी तीव्रता को रखना चाहिए। पहली नौकरी में तीव्रता नहीं है,भक्ति तीव्रता कम है,आराधना ज्यादा है। दूसरी नौकरी में भक्ति तीव्रता

ज्यादा है, समय कम है। तीसरी नौकरी में दोनों हैं माने भक्ति तीव्रता और समय दोनों ज्यादा हैं। पहली नौकरी से दूसरी नौकरी में जाना है और दूसरी से तीसरी में जाना है।

- 4) आराधना में कामना नहीं होनी चाहिए। इस के कारण आराधना का मूल्य कम हो जाता है। उदा. के लिए अगर भिखारी आप के घर के सामने आकर दीनता से खाना मांगता है तो उसे गुस्से से भगा देते हैं। परंतु मैं (भगवान) अतिथि के रूप में आता हूँ तो खाने के लिए सादर आमंत्रित करते हैं। हम दोनों भिखारी ही हैं। भिखारी का सम्मान नहीं है। मुझे इसलिए सम्मान दे रहे हैं कि मैं आप के घर खाने के लिए नहीं तुम्हें मिलने के लिए आया हूँ। आप यह भी जानते हैं कि भिखारी सिर्फ खाने के लिए आया है। इसलिए आराधना को कामना पूर्ति के लिए करेंगे तो उस का मूल्य और सम्मान खतम होता है। अतः आराधना स्वामी के लिए करना है, कामना के लिए नहीं।
- 5) कोई भी देवता की आराधना करो। परंतु उस पर कितनी भक्ति है? उस भक्ति का स्तर क्या है? यही देखा जाता है। देवताओं के रूप बदलने से कोई लाभ नहीं है। देवताओं के सारे रूप मेरे ही हैं। सारे वेष मेरा (परब्रह्म का) ही हैं। उन सभी में मैं ही उपस्थित हूँ। उदा. के लिए खाते समय घी कितना डाला है? यह खास है परंतु किससे डाला है? (छोटी चम्मच से डाला है या कटोरी से डाला है?) यह देखना नहीं चाहिए। कितनी मात्रा में डाला है यही देखा जाता अगर किसी महिला को घने बाल हैं तो किसी भी तरह की वेणी और गांठ बना सकते हैं। लेकिन बाल बहुत कम हैं तो कैसे भी या कितने प्रकार की वेणी डाले तो भी अच्छा नहीं लगता है ना? ऐसे ही आराधना में भी भक्ति के साथ तीव्रता होनी चाहिए। माने मैं (परब्रह्म) भक्ति का प्रमाण देखता हूँ, आराधना विधान को नहीं देखता हूँ। अगर भक्ति ज्यादा है तो अच्छा लगता है और आराधना कम है तो अच्छा नहीं लगता है।
- 6) कुछ लोग सोचते हैं कि एक रूप की आराधना ही विशिष्ट है। अनेक रूपों की आराधना श्रेष्ठ नहीं है। लेकिन उदा. के लिए 4 बर्तनों में एक एक ¼ (पाव) लीटर दूध रहना, एक ही बर्तन में एक लीटर दूध रहना दूध की गिनती के लिए समान है। ऐसे ही

कितनी भी देवता रूपी बर्तनों में भक्ति रूपी दूध को रखने से भी , यहाँ भक्ति रूपी दूध का परिणाम कितना है यही देखा जाता है। अनेक रूपों में एक ही भगवान है यह ज्ञान हो तो बहुरूपी आराधना भी एक रूपी आराधना ही बनता है।

- 7) मुझे में (परब्रह्म में ) त्री मूर्ति ,उन में 3 करोड़ देवता और उन में 33 करोड़ देवता उपस्थित हैं। मुझे एक नमस्कार करते है तो वह एक नमस्कार 33 करोड़ नमस्कार होगा।
- 8) मेरे (त्रिमुख रूपी दत्तात्रेय) ब्रह्म मुख के लिए ऋषि पूजा ,विष्णु मुख के लिए श्री सत्यनारायण कथा विष्णु सहस्रनाम के साथ पूजा,रुद्र मुख के लिए रुद्राभिषेक करो। सभी ब्रह्मर्षी ब्रह्मांश ही है। सारे देवता विष्णु रुद्रांश ही हैं । मेरे ब्रह्म मुख के जीव्हा पर वाणी सरस्वती ,मेरे मध्य में लक्ष्मी ,मेरे शिव मुख के वामभाग में गौरी प्रकाशित हो रही हैं । ये तीनों शक्तियाँ मिलकर दुर्गा के रूप में मेरे (परब्रह्म)अंदर ही उपस्थित हैं। मुझे से अलग न होनेवाली वह शक्ति ही श्री शक्ति हैं ।
- 9) मैं ही (परब्रह्म ) भोगमोक्ष प्रदान करनेवाला हूँ। भाग्य से संतुष्ट कराकर जीवों को बाद में मोक्ष देता हूँ। मेरे(परब्रह्म) षोडशाक्षरी मंत्र में स्थित नव बीजाक्षर ही नवग्रह हैं। वे मेरे शरीर भागों का आश्रय लेकर चल रहे हैं ।
- 10) मेरी आराधना के लिए मेरी (परब्रह्म)पादुका ही काफी हैं । क्यों कि वेद शूनक रूपों में मेरी पादुकाओं को चाट रहे हैं। सारी अपवित्रताओं को निकालने वाले वेद ही मेरे (परब्रह्म) आगे अपवित्र शूनक बनकर मेरे चरणों के पास रहते हैं तो मेरी पवित्रता (के बारे) मानव के सोच के बाहर है।
- 11 ) त्रिमूर्तियों से बढ़कर और कोई नहीं है। अतः त्रिमूर्त्यात्मक रूपी मुझे (दत्तात्रेय) से बढ़कर और कोई नहीं है। मेरी (परब्रह्म) आराधना अनेक प्रकार कर सकते हैं । इन में हैं - ध्यान,जप,दोनों हाथ जोड़कर परिक्रमा करना,गायन,पद्य पठन ,करतालों से भजन ,मेरे चित्रों

को देखना , मेरे बारे में लिखे गये ग्रंथों का पारायण करना ,मेरी कहानियों को सुनना और सत्संग करना ,मेरे बारे में लिखना ,प्रचार करना ,मेरे कार्यों के लिए (परब्रह्म के कार्यों में ) भक्त अपनी शक्ति और समय का उपयोग करना,भक्त अपने कर्म फल रूपी धन को समर्पित करना,इन मार्गों के द्वारा मेरी आराधना कर सकते हैं । किसी को भी कम नहीं समझना ये सारे मार्ग मेरे पास पहुँचनेवाले ही हैं । सारे दैव रूप मेरे ही हैं। उस मार्ग द्वारा वह भक्त मुझे पहुँच सकते हैं । उदा . के लिए एक प्रकार की सब्जी से बनाया गया या 4, 5 सब्जियों को मिलाकर बनाया गया सालन हो तोभी कितना खाया यही गिनती करते हैं। यही प्रमाण के रूप में लेते हैं। ऐसे ही कोई भी मार्ग अपनाये ,तुम मेरे लिए (परब्रह्म के लिए) कितनी शक्ति , कितना समय और कितना धन दिया ?तुम्हारी भक्ति की तीव्रता कितनी है ? यही देखा जाता है।

वाक ,मन और बुद्धि से आराधना करना भाव रूप आराधना होता है। कार्य रूप कर्म करना ,कर्मफल त्याग करना क्रिया रूप आराधना होता है। भाव रूप आराधना से क्रिया रूप आराधना होना चाहिए। क्रिया रूप आराधना के बिना केवल भावरूप आराधना प्राण रहित शव के समान निष्फल है।

12 ) श्रीशैलम क्षेत्र में (आंध्रप्रदेश के प्रसिद्ध ज्योतिर्लिंग मंदिर )स्थित भ्रमराम्बा(देवी माँ ) मेरी मूल कारण शक्ति है। मल्लिकार्जुन स्वामी(महादेव) ही मेरे त्रिमुख षड्बुज रूप है । मैं अकेला ही विभिन्न नाम रूपों के साथ भोग मोक्ष प्रदाता हूँ। इसलिए श्रीशैलम क्षेत्र पुनर्जन्म रहित से मुक्ति प्रदायक क्षेत्र बन गया ।

13) मेरी आराधना की सारी पद्धतियाँ सभी को अपनाना संभव नहीं होगा। उस समय में हर कर्म को मुझे समर्पण करने की भावना से करते हैं तो वह भी मेरी आराधना होगी।उदा. के लिए खाना पकाना । यह मेरी आराधना (पद्धतियों में) मार्गों में नहीं है। फिर भी आप जो खाना पका रहे हैं ,वह मुझे नैवेद्य के रूप में समर्पण करने की भावना से बनाएँगे तो वह भी मेरी आराधना होगी। अतः हर किसी में मुझे देखो। अंतर्यामी के रूप में मैं (परब्रह्म) सर्व सृष्टि के आधार के रूप में फैला हुआ हूँ । हर प्राणी(मानव)को मेरे (भगवान के)समान समझो। इस के कारण जब मैं (परब्रह्म ) नरकार में आता हूँ तब मुझे घृणा नहीं करोगे। वास्तव में मैं इस पूरी सृष्टि से अतीत हूँ। इस लिए मैं कोई मानव नहीं हूँ। लेकिन मैं (परब्रह्म) जब नराकार में आता हूँ तब सह मानव पर तुम्हारे

मन में जो ईर्ष्या थी ,उस के कारण तुम मेरे ऊपर भी ईर्ष्या के कारण घृणा दिखाओगे। इस से बचने के लिए तुम सभी मानवों को देवताओं के रूप में समझ कर सेवन करो।

- 14) दर्शन पाना (भगवान का प्रकट होना) कोई बड़ी बात नहीं है। रावण ने महादेव का दर्शन किया । परंतु क्या प्रयोजन है? ईश्वर की कृपा के पात्र नहीं बन पाया । लेकिन कृपा पाना ही विशिष्ट है । राजा को गल्ली से जाते हुए देखते हैं । उस से क्या फायदा है ? हमें उनकी कृपा चाहिए । श्री राम ने महादेव का दर्शन नहीं किया ,लेकिन महादेव की कृपा पाया।
- 15) भक्ति के लिए विश्वास ही शक्ति है। जिस प्रकार शक्तिहीन काम के लक्ष्य तक नहीं पहुँच सकता है ,वैसे ही अगर भक्ति का विश्वास कम हुआ तो अंतिम लक्ष्य (परब्रह्म) तक पहुँच नहीं सकते हैं।

- 16) आप की इच्छाएँ मुझे (भगवान) बोलना है? मुझे सभी मालुम है। मैं सर्वज्ञ हूँ। अतः मैं सब कुछ जानता हूँ। मुझे सुनाई नहीं देता या मैं देख नहीं सकता हूँ क्या मैं बधिर हूँ ?अंधा हूँ? कोई बात नहीं , मन की इच्छाएँ हटा दो । मेरी ओर दृष्टि रखो। क्या मैं तुम्हें उपेक्षा करूंगा ?
- 17) तुम्हारी साधना में जो सहायता करते हैं ,वे ही तुम्हारे रिस्तेदार हैं। परंतु सिर्फ रक्त बंधन से जुड़े अशाश्वत और असत्य बंधनों पर भ्रम छोड़ो। सदभक्त जन ही तुम्हारे रिस्तेदार हैं।
- 18) भक्ति रूपी पौधे का विकास रोकनेवाला कीटाणु ही कामनाएँ हैं । अगर तुम उसे नाश करोगे तो तुम्हारी भक्ति सफल होगी।

- 19) तुम कोयला हो । अग्नि रूपी मैं (भगवान)तुम्हारे पास पहुँचते ही तुम्हारे अंदर गरम और लाल रंग आकर धीरे धीरे तुम भी अग्नि बन रहे हो। अतः तुम्हें मेरा स्मरण सदा रहेगा तो तुम्हें कैवल्य सिद्धि होगी। अर्थात् तुम ही मैं ,मैं ही तुम बन रहे हो। लेकिन ऐसा बनना मेरी (भगवान) इच्छानुसार होगा,न कि तुम्हारे इच्छानुसार।
- 20) भगवान श्रद्धा और भक्ति को ही देखता है। उनकी आराधना करते समय तुम्हारी भाषा और क्रिया कलाप को देखते नहीं हैं। चाहे तुम श्लोक या स्तोत्र संस्कृत में पढ़ो या अपनी मातृभाषा में । दोनों एक ही है। जहाँ भावना है ,वहाँ भगवान है। भक्ति भावना क्रिया रूप में भी व्यक्त होना चाहिए। तभी वह भक्ति सच्ची भक्ति मानी जाती है। भक्ति भाव रूप और क्रिया रूप में भी होना चाहिए।जैसे आप को अपने अपने औलाद पर प्यार भाव रूप और क्रिया रूप दोनों में भी होता है।
- 21) सारी देवी देवताओं के वेष मेरा ही है। इन में किसी की निंदा करें तो वे मुझे (परब्रह्म) ही पहुँचते हैं । उदा के लिए सखाराम नामक (अभिनेता) कृष्ण पात्र के वेष धारक को हम पैर पर चोट पहुँचाये तो वह सखाराम को ही लगता है ना ! वही अभिनेता राम के पात्र का वेषधाराण करेगा तोभी वह चोट है तब भी रहता है। सखाराम कुछ समय के लिए सारे वेष छोड़कर आराम करना चाहता है। तब भी उस के पैर पर घाव रहता है। अतः सभी वेषों को अलग करते हैं तो सच्चे रूप में मूल सखाराम रहेगा। वहीं मैं श्री दत्तात्रेय हूँ।
- 22) जैसे सारे देवता रूप मेरा (परब्रह्म) ही हैं वैसे ही सभी आराधना पद्धतियाँ समुद्र में मिलनेवाली नदियाँ जैसे मेरे ही मार्ग हैं । इस लिए तुम अपनी इच्छानुसार पसंदीदा मार्ग में ,अपनी रुचि के अनुकूल देवता रूप की आराधना द्वारा मुझे पहुँचोगे। मैं सभी देवतारूपों का वेष धाराण करके सब को संतुष्ट कर रहा हूँ,तुम्हें यह बात भूलना नहीं है। समुद्र में मिलनेवाली हर नदी की पानी जैसे हर मार्ग में क्रिया रूप भक्ति होनी चाहिए।
- 23) निष्काम कर्मयोग का रहस्य यह है कि बिना कोई कामना के साथ करनेवाली आराधना रूप और सेवा से भगवान को प्रसन्न करना। बिना कोई प्रतिफल की कामना करते हुए प्रेम और सेवा करना। जैसे आप अपने औलाद को बिना कोई प्रतिफल के प्रेम और सेवा करते हैं वैसे ही भगवान की आराधना और सेवा करना है।

- 24 ) शक्ति माने वाणी ,लक्ष्मी और पार्वती है। श्री दत्त माने ब्रह्म ,विष्णु और महेश्वर हैं। तीनों शक्तियाँ मिलकर मेरे अंदर श्रीशक्ति के रूप में बदलकर मुझ से (परब्रह्म) अभिन्न रूप में मुझ में समाए हुए हैं। इस लिए मैं छःमूर्तियों का रूप हूँ। मेरे छाया (श्री दत्तात्रेय) इस को सूचित कर रहे हैं। मुझ से अलग कोई शक्ति नहीं है। मैं ही श्रीशक्ति हूँ । मैं ही श्रीविद्या के आदि गुरु हूँ । श्री चक्र श्री मंत्र के अर्थ भी मैं ही हूँ। शक्ति मुझ से भिन्न और अलग न होकर मेरे अंदर ही स्थित है। यही श्री विद्या रहस्य है।
- 25) शिव और शक्ति का संयुक्त रूप ही श्री दत्त भगवान हैं।जो मेरे (परब्रह्म के) बारे में जानना असंभव है सोचता है, वही मेरे बारे में जानता है। जो मेरे बारे में जानते हैं सोचनेवाले कुछ नहीं जानते हैं। हमेशा विचार विमर्श करके एक निश्चित स्तर पर पहुँचना है। इस स्थिरता के साथ तीव्र प्रयास करना है। वह मुझे पाने के लिए (नरावतार में) कारण बनेगा। मुझे (परब्रह्म)प्राप्त करने का एक ही मार्ग है, वह है प्रेम रूपी भक्ति ।
- 26) सांसारिक विषयों को त्याग करो। उससे वैराग्य की सिद्धि प्राप्त होती है। लोक बंधनों से दूर होने के बाद सत्संग के साथ रहना है। तदुपरांत पुरुष प्रयत्न द्वारा समग्र प्रयास करना है,अर्थात् विनम्रता से मुझे (परब्रह्म) याचना करना है कि आप की कृपा दृष्टि रखिए। तब मैं (परब्रह्म)भक्ति को प्रदान करूंगा । उस तरह की भक्ति बिना कोई आशा की (निष्काम ) होनी चाहिए। वही भक्ति पराभक्ति कहलाती है। उस के फलस्वरूप मैं कैवल्य प्रदान करता हूँ।
- 27) कर्तव्य की जिम्मेदारी निभानेवाले समय और शक्ति को तीन प्रकारों में नियोजित कर सकते हैं । वे हैं -1] कर्तव्य का पालन करना 2] आराम करना और 3] भगवान की आराधना करना। सांसारिक (पारिवारिक) कर्तव्यों को जो लोग खतम कर चुके हैं वो समय को दो तरह नियोजित कर सकते हैं - वे हैं- 1] आराम और 2] देवाराधना। सांसारिक कर्तव्य खतम होने केबाद भी अनावश्यक रूप ही बंधनों में फसकर जो लोग खुद को समर्थन करते हैं ,वो लोग अपने आप को वंचित करते हैं।
- 28 ) तुम्हें श्री गुरु और दत्त रूपी सेतु बननेवाला भी मैं ही हूँ,तुम्हें जो पहुँचने लक्ष्य है ,वह भी मैं ही हूँ। गुरु और देवता के संयुक्त रूप में रहनेवाले मैं तुम्हारे इस लोक की बाधाओं को दूर कर आध्यात्मिक मार्ग द्वारा तुम्हें अपने पास रखता हूँ। मैं ही शक्ति हूँ।

में ही महेश्वर हूँ। मैं ही हनुमान हूँ। मैं ही श्री राम हूँ। मैं ही गम्य हूँ। मैं ही मार्ग हूँ। तुम्हारी दृष्टि मुझ पर रखो। तुम्हारे जीवन की सार्थकता के लिए यही काफी है। इससे तुम्हारे जीवन का लक्ष्य पूरा होगा। भगवान द्वारा तुम्हारा उद्धार भी होगा।

29) योग की सिद्धि के लिए इन दोनों विषयों को हर दिन कम से कम दस बार दोहराना चाहिए। जब जिंदगी के अंतिम समय में जीव को होश दी जाती है, तब जीव यह सोचता है कि जिन के लिए मैं ने पूरे जीवन को गवाया, ओ मेरी रक्षा नहीं कर रहे हैं। जो मुझे अब रक्षा कर सकते हैं, उनके लिए मैं ने अपने जीवन अपनी शक्ति और समय का उपयोग नहीं किया। अतः वे अब नहीं रक्षा करेंगे। यह ज्ञान और जानकारी होने के बाद अब आराधना के लिए मेरे पास समय नहीं है। समय रहते हुए मुझे ज्ञान नहीं था। अंतिम समय में जो वेदना होती है वही मरण(मृत्यु) वेदना है।

30) यम माने बाह्य इंद्रियों को काबू में रखना, नियम माने अंतर्द्रियों का निग्रह करना। सांसारिक विषयों के लिए अनावश्यक रूप में शक्ति का उपयोग न करते हुए अंतर्द्रियों का निग्रह करके शक्ति का उपयोग भगवान की आराधना करने के लिए प्रयोग करना प्रत्याहार है। आसान माने शरीर को स्वस्थता के साथ एक जगह स्थिर रूप में बिठाना। प्राणायाम द्वारा मन को निश्चलता और बल मिलता है। इस प्रकार शक्ति को इकट्ठा करके लगातार करनेवाले भगवत आराधना ही धारणा है। भगवान की कृपा दृष्टि से सदा भगवान का चिंतन मनन करना ही ध्यान है। उस का परिणाम ही हैं सालोक्य (एक ही लोक में रहना), सामीप्य (भगवान के साथ रहना) सारूप्य (भगवान के समान तुलसी की माला पहनना या रुद्राक्ष की माला पहना, ऊर्ध्व त्रिपुंड्र को तिलक के रूप में धारण करना या बबूती[भस्म] को भी तिलक के रूप में लगाना), और सायुज्य माने निरंतर सेवा द्वारा भगवान के सान्निध्य में रहना। ये चारों लक्षण सविकल्प समाधि का है। निर्विकल्प समाधि में कैवल्य प्राप्त कर जीव मुक्ति को प्राप्त करता है। (कैवल्य माने भगवान और भक्त एक होना। यह अवतार में ही होता है।)

31) भोजन को सीमित रूप में लेना है और वह मूल्य में ऊर्जावान होना चाहिए। जिससे तबीयत बिगड़ जाती है, उन सभी को विसर्जित करना है। अति भोजन नींद का कारण है। उपवास कमजोरी का कारण है। अतिवृष्टि और अनावृष्टि दोनों आराधना (भगवान की) में बाधा डालते हैं। अति आराम आलसीपन तक पहुंचता है। आराम (अविश्रान्ति) न लेना रोग बढ़ाता है। अतः सीमित रूप में विश्राम चाहिए गहरी नींद ही विश्राम है।



32) सत्व गुण द्वारा ही स्वामी (परब्रह्म) से संबंध स्थापित होता है। जीव सृष्टि का एक भाग ही है, सृष्टि कर्ता नहीं है। सूर्य, वायु आदि पर शासन चलानेवाले परमात्म कहाँ हैं? तेज हवा के सामने न खड़े होनेवाले जीव कहाँ हैं? सूक्ष्म विश्लेषण से जीव को समझ सकते हैं। परंतु कितने भी विश्लेषण करें तो भी परमात्म के बारे में समझ नहीं सकते। घमंड और ममता छोड़ दो। भगवान के शरण में जाओ। उद्धार हो जाओगे।

33) जिस के साथ जुड़ने से तुम्हारी पूरी शक्ति का दुरुपयोग हो रहा हो, उसे पहचान कर उस के संग छोड़ दो। सन्मार्ग दिखानेवाले सद्गुरु के संग में रहो। वैसे सद्गुरु प्राप्त होना दुर्लभ है। सिर्फ भगवान की कृपा से प्राप्त होते हैं। उन की सेवा करो। वे अल्प संतोषी हैं। उनके पास जो अमूल्य ज्ञान रूपी हीरे की निधि है उसे तुम को प्रेम से देते हैं। उस दिन वहाँ मूर्ख व्यक्ति, उसे न पहचाननेवाले पत्नी और पुत्रों के लिए पूरा धन खर्च करते हैं और सद्गुरु की सेवा में कंजूस करते हैं। तुम्हारी सहायता कर दैवाराधना के लिए प्रेरित करनेवाले महान व्यक्ति तुम्हारे घर के पास आकर 'भिक्षाम देहि' कहकर भिक्षा माँगेगा तो उस पर चिल्लाकर नफरत से भेज रहे हो। तुम्हें सहायता करने के लिए मैं (भगवान) उसी रूप में आता हूँ। तुम ने मुझे कितनी बार नफरत किया?

34) जीव को पूर्ण स्वातंत्रता दिया गया है। वे अपनी बुद्धि के अनुसार कर्म करते हैं। लेकिन मैं (परब्रह्म) उन से कर्म करवाकर सारे कर्मों के लिए कर्ता नहीं बन रहा हूँ। कुछ लोग अज्ञान के कारण कर्तृत्व की ज़िम्मेदारी मेरे ऊपर रख रहे हैं। जीव और जगत की सृष्टि मैं ही कर रहा हूँ। अतः मैं (परब्रह्म) सर्व कर्ता हूँ। परंतु जीव को बुद्धि प्रदान कर अच्छाई बुराई को धर्म शास्त्रों के द्वारा और अवतारों के संदेशों के द्वारा बता रहा हूँ।

35) चाहे अच्छा हो या बुरा हो, इसे चुनने की स्वतंत्रता जीव को दे चुका हूँ। इस लिए वे अपने अच्छे बुरे कर्मों के लिए खुद कर्ता है। मैं (परब्रह्म) नहीं हूँ। खुद के कर्मों के फल को भोगने वाले वे जीव ही भोक्ता है। मैं (परब्रह्म) उन के कर्मफलों के भोक्ता नहीं हूँ। जगत की सृष्टि करने में कर्ता हूँ और उस सृष्टि का अवलोकन करते हुए खुशी प्राप्त करनेवाले भोक्ता मात्र ही हूँ।

36) मेरे भक्त बुलाते हैं तो आता हूँ। जो नहीं बुलाते हैं, उसे देखता रहता हूँ। लेकिन उनके पास आता नहीं हूँ। पुकारते ही आकार रक्षा करता हूँ। अतः मुझे हमेशा पुकारते रहिए। अर्थात् मेरे नामों को सदा स्मरण करते रहेंगे तो कोई भी संकट अचानक आने से भी मैं (परब्रह्म) तुम्हारे साथ रहकर तुम्हारी रक्षा करता हूँ।

37) धर्म के लिए अधर्म को छोड़ना चाहिए। मेरे लिए (परब्रह्म के लिए) धर्म को भी छोड़ना चाहिए। मुझ से भी धर्म महान है सोचनेवाले मेरी परीक्षा में हार जाते हैं। ऋषि लोग यज्ञ के पहले मुझे अन्न (खाना) देना मनाकर मेरी (भगवान) की परीक्षा में हार गए। अंबरीष ने मुझ से भी मेरे धर्म को ज्यादा मूल्य देकर श्राप पाया। अनसूया माता ने मुझ से ज्यादा अपने पतिव्रताधर्म को मूल्य नहीं दिया। अतः उन्होंने वरदान प्राप्त किया। वैसे ही सुमति घर में हो रहे श्राद्ध (के दिन) में भोक्ताओं के भोजन के पहले मुझे भिक्षा दे कर धर्म से ज्यादा मुझे मूल्य दिया। धर्माचरण मेरी (भगवान) कृपा पाने के लिए ही है। अतः मुझ से बढ़कर धर्म महान नहीं है।

38) हर दिन भगवद्गीता पाठ का पारायण के रूप में करना व्यर्थ है। क्यों की भगवद्गीता में कहा गया कि "इस प्रकार आचरण करो"। गीता में कहे अनुसार आचरण न करते हुए हर दिन इस प्रकार आचरण करो, इस प्रकार आचरण करो कहकर कंठस्थ करना व्यर्थ है। क्यों कि गीता सिर्फ आचरण करने का आदेश दे रही है। गीता "तुम 8 बजे भोजन करके 9 बजे सो जाओ" कहनेवाली आदेशात्मक वाक्य है। एक दिन भी उस का पालन न करते हुए, समय पर खाना न खाते हुए और न सोते हुए रोज उस वाक्य का पारायण करने में क्या प्रयोजन है

39) ब्रह्मचर्य द्वारा शक्ति को बचाकर, उसे भगवान को उसी आकर्षित रूप में समर्पण करना ही रास क्रीड़ा है। गोपिकाएँ महिलाएं नहीं हैं, वे ब्रह्मचारी -ऋषि -जीव हैं। कृष्ण भी पुरुष नहीं हैं। गुण के रूप में, परब्रह्म रूपी मैं ने ही यदुवंश का उद्धार करने के लिए वासुदेव के रूप में अवतार ग्रहण किया।

40) वात शरीर को ,कफ वाणी को और पित्त मन को रोगग्रस्त बनाकर आराधना के लिए अङ्घने डालते हैं । अतः वायु पैदा करनेवाले वस्तुओं को खाना कम करना चाहिए। कंद और दाल वायु को पैदा करते हैं। ठंडी और मीठी चीजें कफ को बढ़ाते हैं। तेल आदि पदार्थ पाचन शक्ति को कम करके अजीर्ण करता है। इससे पित्ताशय के काम को धीमा करता है। विरुद्ध पदार्थ भी पित्त को बढ़ाते हैं। बारिश के दिनों में यात्राएं नहीं करना है। इस प्रकार आहार विहारों को नियमित करना चाहिए।

41) अभ्यास (साधना)करनेवाले जीव देह के स्थित अंतरात्मा ही है। जगत के अंतर्यामि नहीं है। मन को लगाकर कर्तव्य का पालन करना चाहिए। आराम लेते हुए बचा समय सांसारिक विषयों से दूर रहते हुए उन के प्रभाव से बचकर रहना है। इस प्रकार मेरी (परमात्मा) आराधना में निमग्न होना ही गृहस्थाश्रम का धर्म है।

42 ) मृत्यु और मुक्ति के बीच में कोई संबंध नहीं है। जीवित रहते हुए जो प्राप्त किया ,उसे ही मृत्यु के बाद पाओगे। अतः जीवित समय में जो साधना नहीं कर सकते वह नहीं होता है। साधना मार्ग द्वारा ही जीवित काल में मोक्ष और सिद्धियों को प्राप्त करना है। जीवन मुक्ति ही सच में मुक्ति है। मृत्यु के बाद फल का अनुभव करना ही है । साधना (अभ्यास)नहीं कर सकते हैं ।

43) वेदांत में जो कहा गया है, उस के अनुसार ब्रह्म ही ईश्वर है। ईश्वर ही ब्रह्म है। जागकर सपने देखनेवाले हैं ईश्वर। सपने से ही बद्ध होकर दृश्यों के रूप में देखनेवाले जीव है। विश्व रूप प्रदर्शन ही पूर्ण सिद्धि है। अतः पूर्ण सिद्धि ही मेरा लक्षण है। इस लिए मुझे साधने की आवश्यकता नहीं है। विश्व की सृष्टि,स्थिति और लय ही मेरे द्वारा प्रदर्शित मेरी पूर्ण सिद्धि है।

44) मेरी स्तुति (भगवान की) एक ही प्रकार की वाणी द्वारा करने के बजाय अलग अलग स्तोत्रों से करना अच्छा लगता है। मुझे पसंद है। सहस्रनाम और रुद्राभिषेक के बजाय विभिन्न वाणियों के माध्यम से अर्थात् पद्य (ऋग्वेद)वचन (यजुर्वेद)गीत (सामवेद) नामजप(अधर्वण वेद)से महेश्वर की आराधना करो। वह मुझे बहुत ही पसंद है। चावल एक ही स्वादिष्ट रहेगा क्या ? अलग अलग व्यंजनों के साथ खाएँगे तो स्वादिष्ट लगता है न।

45) सांसारिक विषयों में मग्न जीव को छोड़ कर दैव भक्तों के साथ दोस्ती बढ़ाओ। कामनाएँ छोड़ दो । अष्टसिद्धियाँ ,इच्छाएँ ,आखिर मोक्ष की भी कामना नहीं करना चाहिए। तब

साधक जीव को कैवल्य प्राप्त होगा। बिना कामना के कोई भी, सिर्फ मेरी आराधना से पानेवाले आनंद की कामना करते हैं, वही सच्चे रूप में मेरा भक्त है।

46) मेरी निर्गुण दशा का अर्थ है गुणों का अतीत हूँ। गुण माने सृष्टि। गुण द्वय पर आश्रित है। कमल (फूल) द्रव्य है। उस का लाल रंग गुण है। कमल(के फूल)पर जिस तरह लाल रंग आश्रित है, वैसे ही सृष्टि मुझ पर (परब्रह्म) आश्रित है। मैं किसी पर भी आश्रित नहीं हूँ। मैं स्व आश्रित हूँ। अतः मैं सृष्टि नहीं हूँ। सृष्टि कर्ता हूँ। इस लिए मैं गुण नहीं हूँ। अतः निर्गुण हूँ। तो भी मैं भक्तों के ध्यान की सुविधा के लिए गुणके रूप में बदलता हूँ। वह गुण मैं ही हूँ। इस प्रकार मैं गुण और निर्गुण दोनों एक ही समय में बन सकता हूँ। वह मेरी सर्व शक्ति के लिए साध्य है।

47) अभ्यास (साधना) आराधना में होना चाहिए। जैसे तुम हमेशा वस्त्र पहनकर रहते हो, वैसे ही मेरी आराधना में रहो। समय के अनुसार वस्त्र को बदल सकते हैं। परंतु जैसे वस्त्रहीन(बिना वस्त्र के) नहीं बन सकते, वैसे ही आराधना विधि बदल सकता है। लेकिन आराधना रहित नहीं रहना है। अर्थात् एक बार जप, एक बार भजन, एक बार पूजा, एक बार ग्रंथ पठन और एक बार सत्संग करना चाहिए। इस प्रकार बदलते रहना चाहिए। आराधना में ज्ञान, कर्म, योग और भक्ति की बहुत आवश्यकता है।

48) शौच माने सत्संग। अशौच माने दुत्संग। दुष्ट लोगों का दर्शन, स्पर्शन, भाषाण और उनके द्वारा दी गई खाने की चीज को खाना बुद्धि को दोष पूरित कर रहे हैं। उन के गुण तुम पर हावी हो जाएंगे। उस तरह के लोग पसंद है तो भी छोड़ दो। ज्यादा लोगों से परिचय होना सम्मान है, ऐसा मत सोचो। कीर्ति मोक्ष साधने के लिए औजार नहीं है। अतः सद भक्तों को चुनकर उन के साथ सान्निध्य बढ़ाएंगे तो उद्धार हो जाओगे।

49) आराधना में निष्काम रूप से रहना बहुत ही प्रधान है। निष्काम आराधना के लिए अनंत फल देने के लिए सुदामा (कुचेला) की कहानी उदा. है। प्रह्लाद ने मुझ से कुछ नहीं याचना की। कन्नप्पा ने भी मुझ से कुछ नहीं पूछा। इच्छाओं के अनुसार वर मांगनेवाले उस में डूबकर अंत में पतन हो जाते हैं। जो कामना रखते हैं वो कार्तवीर्याजुन जैसे पतन हो जाएंगे।

50) मैं एक मिट्टी का कौर हूँ। उस का एक ही रूप है। उससे जो आकार चाहिए उसे बना सकते हैं। जैसे : घड़ा, बर्तन, आदि। वैसे मुझ से ही (परब्रह्म) सर्वदेवता के रूपों का उद्भव हो रहे हैं। ये सारे देवी देवता के रूप मेरा ही वेष हैं। अलग से रूप नहीं हैं। जब रूप बदलता है तब गुण भी बदलता है। जिस तरह दूध दही में बदलता है। अतः सर्व देवी देवता मेरा ही वेष हैं, रूप नहीं हैं। बिना कोई वेष धारण के मूल रूप ही मेरा दिगंबर रूप है। यही दिगंबर शब्द का अर्थ है।

51) मेरी सृष्टि पर किसी भी तरह की आशा न रखते हुए, सिर्फ मुझ पर और मेरी सेवा में आशा रखनेवालों को देखने पर मुझे (परब्रह्म) अत्यधिक आनंद मिलता है। कभी और कहीं ये दो बातों को छोड़ दो। अभी यही सिद्धि को प्राप्त करने के लिए प्रयास करना है। उस प्रयास में मैं सहायता करूंगा। अब जो नरजन्म प्राप्त हुआ है वह दुबारा प्राप्त होगा कि नहीं भरोसा नहीं है। अगर नर जन्म मिलता है तो भी इस प्रकार का भक्ति वातावरण मिलेगा, यह निश्चय नहीं है। जो मौका मिला है उसे मत छोड़ो। मुझ से मोक्ष की प्रार्थना करो। मेरी बातों का मूल्य समझनेवाले, मेरे एक एक वाक्य द्वारा प्राप्त आनंद करोड़ों रुपये मिलने से भी प्राप्त नहीं होता। अगर बंदर को हीरों की माला देते हैं तो फेंक देता है, वैसे ही मूर्ख व्यक्ति मेरे वाक्यों को शुष्क दर्शन मान रहा है। इस लोक में लौकिक विषयों के ज्ञान की साधना को तुम अधिक मूल्य दे रहे हो तो मोक्ष की साधना के लिए तुम्हें और कितना अधिक मूल्य देना है सोच लो।

52) भगवान (परब्रह्म)की खुशी ही अपनी खुशी के रूप में ग्रहण करना ही भक्ति है। परब्रह्म को जिससे आनंद मिलेगा, वही अपनी दृष्टि में भी आनंद देनेवाला है। उसी को धर्म के रूप में निश्चय करना ही भक्ति का सार है। इस तरह के भगवान के प्रेम में लेश मात्र भी स्वार्थ नहीं होता है। लोक में स्थित सारे प्रेम स्वार्थ ही है। वे अनित्य और असत्य है। जैसे एक गेरुवे रंग के वस्त्र को ढकनेवाले चोर को प्रणाम करते हैं और बाद में उस वस्त्र को निकालने से उसका असली रूप देखने से द्वेष पैदा होता है, वैसे ही पत्नी जवानी में सिर्फ चमड़ी के घूँघट से आकर्षित कर रही है, किन्तु उस घूँघट को हटाने से अंदर मांस, मल, मूत्र आदि घृणा पैदा करती है। वही जवानी युवती को बुढ़ापे में चमड़ी पर झुर्री आने से आकर्षण खतम होता है। अतः वह अनित्य है।

53) इस लोक में सारे प्रेम स्वार्थ पर ही आधारित होते हैं। पति पत्नी को प्रेम करता है और उस प्रेम के कारण पत्नी उस को आनंद देती है। पत्नी के आनंद के लिए नहीं प्रेम करता है। इसलिए यह प्रेम उस का (पति का) स्वार्थ है। ऐसे ही पत्नी का प्रेम पति पर भी है। इसी प्रकार माता-पिता का प्रेम बच्चे पर और बच्चों का प्रेम माता-पिता पर होता है। केवल भगवान के प्रेम में स्वार्थ नहीं है। क्यों की भगवान का आनंद स्वयं विद्यमान है। जीवों से नहीं पैदा होता है। ये बात वेद में याज्ञवल्क्य महर्षि ने कहा।

54) मेरी (परब्रह्म) की आराधना में समय और पद्धति महत्वपूर्ण नहीं है। भाव महत्वपूर्ण है। तुम अपने पुत्र को एक प्रत्येक समय में हर बार एक ही पद्धति में प्यार कर रहे हो क्या? तुम्हारे बेटे पर प्रेम उमड़ने का कोई भी समय हो सकता है। उस समय तुम्हें जो लगा, वैसे ही अपने पुत्र पर प्रेम दिखाओगे ना !उसी प्रकार तुम्हें मुझ पर किसी भी समय पर प्रेम उमड़ सकता है। वही पवित्र संध्या काल है और उसी समय में तुम्हें जो लगा,वैसी पद्धति में मेरी आराधना करो। वह भजना भी हो सकता है,नैवेद्य भी हो सकता है,मंत्रोच्चारण भी हो सकता है या मौन रूप में अंदर ही अंदर भावना करना भी हो सकता है। भाव रहित सिर्फ निश्चित संध्या समय में हर दिन निश्चित एक ही यांत्रिक आराधना विधि द्वारा मुझे आकर्षित नहीं कर सकते हैं।

55) सत्संग के कारण आध्यात्मिक विषयों के विकास की ओर रुचि बढ़ाकर आवधूत के तत्व (सांसारिक बंधनों को फेंककर)प्राप्त कर,भगवान के नजदीक पहुँच रहा है। उसी प्रकार लौकिक ज्ञान से सांसारिक विषयों की रुचि की वृद्धि हो गया तो अवधूत के तत्वों से दूर होकर बिगड़ जाओगे। अतः सत्संग में समय बिताओ ,लौकिक प्रसंगों से दूर रहो।

56) सांसारिक भावोद्रेकों का निवारण करो। वैराग्य और तटस्थता अपना लो। इन से तुम्हारी शक्ति दुरुपयोग होने से बच जाएगी। सच्चे भक्त भगवान को एकांत और रहस्यमय रूप में अंतर्मुख होकर आराधना करता है। एकांत सेवा और अंतर्मुखत्व का अंतरार्थ यहीं है ।

57) इस लोक के बंधन (ऐहिक विषय)तुम्हारे साथ नहीं आएंगे । अंतिम समय में तुम्हारी रक्षा नहीं करेंगे। ये सारे क्षणिक हैं । ऐहिक विषय यह जन्म खतम होते ही तुम्हें छोड़कर चलेजाएंगे। परंतु तुम मुझे(भगवान को)चाहे तो जन्म जन्म में तुम्हें छोड़े बिना तुम्हारे पीछे पड़ूँगा। अततुम मुझे (भगवान) चाहते हो या ऐहिक विषय ? यही दत्तात्रेय भगवान की परीक्षा है । इस लिए वैराग्य के साथ रहो। मुझे ही सदा स्मरण करो। मेरे ऊपर ही हर क्षण तुम्हारी दृष्टि रखो। कोई भी जीव हो ,किसी भी दिन हो ,जीव का उद्धार करनेवाला सिर्फ मैं ही मैं ही मैं ही अकेला हूँ।

58) मुक्ति का अर्थ है इस सांसारिक बंधनों से अलग होकर मेरे(भगवान के) सेवक बनकर , मेरे कार्यक्रम में काम करना । स्वामी के कार्य में काम करना ही स्वामी की सेवा है। परंतु नारियल ,कपूर और अगरबत्ती का सुगंध तुम ही अस्वादित कर रहे हो,मुझे कोई संबंध नहीं है। लोकोद्धार से संबंधित कार्यों में भाग लो तो मेरे सच्चे सेवक बन जाओगे। मुक्ति माने 'मेरा' भाव को निकालना ही है। वह 'मेरा' निकल गया तो 'मैं' की भावना खतम होती है। तब कुछ भी मेरा नहीं है ,ऐसा भाव प्राप्त होगा। उस तरह के लोगों में मैं (भगवान) संपूर्ण रूप से सम्मिलित होकर रहूँगा। यही जीवन मुक्ति है। इस प्रकार मेरे कार्य में भाग लेना ही मेरी सच्ची सेवा होगी।

59) त्रिमूर्त्यात्मक रूप दत्त सद्गुरु सर्व समर्थ हैं । उन के लिए साध्य और असाध्य कुछ नहीं होते । (सब साध्य है।) मेरा दर्शन (परब्रह्म) हमेशा ज्ञान बोध ही करता है। गुरु स्वरूप को पहचानना है। मैं माया को हरण करनेवाले हूँ। माया की वृद्धि करनेवाले नहीं हूँ। मैं मदिरा पान में डूब जाने की स्थिति में दिखता हूँ तो भी इस का अर्थ है शराब जिस तरह धन,कीर्ति और स्वास्थ्य का हरण करने से भी उसे न छोड़ने का लत बन जाता है ,उसी प्रकार भगवान तुम्हारे धन का हरण करके कष्टों को देते हैं तो भी उन्हें न छोड़ने का लत ही सच्ची भक्ति है। इस का बोध कराना ही उस दर्शन का अंतरार्थ है।

60) अन्नदान ज्ञान के साथ करना है। भूखे लोगों को खाना खिलाना दान है। क्योंकि मेरे बच्चों में एक बच्चा भूख से तड़प रहा है तो उसे खाना खिलाए तो मैं खुश हो जाऊंगा। परंतु जो अन्न कमाने में असमर्थ है ,उसे अन्न देना है । जो आलसी है उसे अन्न नहीं देना है। मेरे भक्त को खाना खिलाओ,उस खाने से शक्ति प्राप्त कर वह मेरी आराधना करके पुण्य कमाता है,उससे थोड़ा पुण्य आप को भी मिलेगा। बिना सोचे अन्नदान करेगा तो लेनेवाले के पापों से कुछ भाग तुम्हें भी मिलता है।

61) तुम्हारी शक्ति और समय को मेरे (भगवानके लिए) लिए उपयोग करो। तुम्हारी वाणी और बुद्धि को भी मेरे लिए विनिमय करो। तुम्हारे धन और ज्ञान को मेरी सेवा में खर्च करो। मेरे ऊपर तीव्र इच्छा रखनेवाले ही जानी हैं । संसार रूपी काम(सांसारिक बंधन )ही अज्ञान है। जीवित काल में सांसारिक बंधनों से मुक्ति पाना ही जीवन मुक्ति है। भक्ति रखनेवाले ही मुझे पसंद है। अतः अत्यधिक भक्ति और सेवा (प्रपत्ति) वाले को ही मैं सिद्धि प्रदान कर रहा हूँ।

62) कल को भूल जाओ। बुढ़ापे में तुम कुछ नहीं कर सकते। उम्र होते हुए ही कुछ साद सकते हो। अनजाने में जो साधना नहीं करता है तो उन्हें फिर नर जन्म कदाचित मिल सकता है। परंतु जानबूझ कर साधना नहीं करते तो किसी भी स्थिति में उन्हें वापस नर जन्म नहीं मिलेगा। ऐहिक विषयों को भोग से शांति नहीं मिलती। उन की भोग से ही वृद्धि होती है । अतः शुरु में ही ऐहिक विषयों की इच्छा को काट दो।

63) मैं भोग और मोक्ष प्रदाता हूँ। यह एक ही वरदान दे दिया तो रास्ते में आएगा सोचकर विश्वास के साथ एक वरदान देता हूँ तो वह और एक और एक पूछ रहा है। निवृत्ति मार्ग पर नहीं आ रहा है। मैं अनंत भोगों का अनुग्रह कर सकता हूँ। उस प्रकार देते रहने से मेरी निधि में कोई कमी नहीं आएगी। जैसे बीमार बच्चे को माँ खाने के लिए मिठाई नहीं देती । इस का कारण मिठाई खतम होने की बात नहीं है। वह खाने से उस बच्चे की तबीयत और बिगड़ जाती है। इस के अलावा कुछ नहीं है।

64) वैराग्य को अपना लो। तुम ऐहिक विषयों को जितना चाहते हो,वे उतने पीछे चले जाएंगे और तुम्हें दौड़ते हुए रुलांगे । वे मृगतृष्णा हैं। भोग के लिए तुम्हें सताकर दुखी करना एक खेल है। भोगों को एक ही बार झटकाकर त्याग करो। धीरे धीरे त्याग करना असंभव है। दिन प्रति दिन चलते हुए उन की बल की वृद्धि होगी और तुम्हारी शक्ति कमजोर हो जाएगी।

65) मेरे इस ज्ञान वाक्य रूपी हीरे को तुम पत्थर समझ कर ,सच में पत्थर रूपी ऐहिक विषयों को हीरे समझ रहे हो । मैं तुम्हें जो ज्ञान हीरे दे रहा हूँ उस का मूल्य तुम्हारे जीवन के अंतिम क्षणों में ही मालुम पड़ेगा । ज्ञान को सुनकर उसे हर क्षण मनन करना चाहिए। मनन करते करते आचरण सिद्धि होगी। उस दशा में रहनेवाले को ऐहिक विषय कुछ भी नहीं कर सकते ।

66) ब्रह्म,विष्णु और शिव लोक ही मेरे लोक है। उन तीनों लोकों में मेरे भक्त स्वेच्छा से घूमते हैं । विष्णु भक्त सिर्फ विष्णु लोक में ही रहते हैं। इस प्रकार अन्य भक्त भी अपने लोक में ही रहते हैं। परंतु मेरे भक्त तीनों लोकों में संचरण करके सिद्ध पुरुष नारद बन जाएंगे। इन तीनों लोकों से बढ़कर और कोई लोक नहीं हैं। मुझ से बढ़कर और मेरे समान कोई दूसरे देवता नहीं हैं नहीं हैं नहीं हैं बोलकर ,बल देकर बता रहा हूँ।

67 ) हमेशा मेरा स्मरण करते हुए मेरे ऊपर ही हरक्षण दृष्टि रखो । मेरी आराधना हमेशा करो। मुझे प्राप्त करोगे। किसी जीव को कोई दिन उध्दार करने के लिए और उध्दार करनेवाले में ही हूँ मैं ही हूँ। सिर्फ मैं अकेला ही उध्दार करता हूँ। भूलना मत। विश्वास रखो। साधना करो । हमेशा सत्संग में रहो। संसार में शक्ति का दुरुपयोग किए बिना उस की रक्षा करो। यही योग है। इस के बिना महा भाव (परमात्मा के साथ भाव रूप कैवल्य) नहीं आता है । याद रखो।

68) जो कोई विषय हो,उसे मन पर लेकर चिंता करना छोड़ दो । चिंता के कारण मन कमजोर हो जाता है। इतना ही नहीं सांसारिक विषयों की ओर आकर्षित होकर आखिर उस के गुलाम बन जाओगे। जो भी हो तुम्हारे हाथ में कुछ भी नहीं है। सारी नियति (कर्म) के वश में हैं। वह नियति भगवान से शासित होकर उन के वश में रहती है । अतः चिंता करने के बजाय भगवान का ध्यान करेंगे तो चिंतित ऐहिक विषय भी सही ढंग से संपन्न हो जाएंगे । सुख और दुख दोनों को छोड़ दो। इन दोनों के द्वारा तुम्हारी शक्ति खर्च हो जाएगी। तुम्हारी शक्ति और समय को मेरे लिए उपयोग करो। तुम्हारे धन और तुम्हारा ज्ञान मेरे लिए खर्च करो। तुम्हारी वाणी और बुद्धि को मेरे लिए विनिमय करो। शिव पार्वती,लक्ष्मी नारायण,वाणी हिरण्य गर्भ (ब्रह्म) मुझ में ही स्थित हैं। यही है मेरे छः तत्व सहित षण्मुखरूप का दर्शन करना।



69) सत्संग बहुत ही उत्तम कार्य है । सदा उसी में रहो। अगर बीच में रोकते हैं तो उस का प्रभाव खतम होकर तुम्हारे जीव स्वभाव हावी होजाएगा । करोड़ों जन्मों के दुत्संग का प्रभाव एक जन्म में निकालना है तो कितनी तीव्रता से सत्संग का आचरण करना है सोच लो। एकबार मैं तुम्हारी ज़िम्मेदारी लिया तो बाद में पूर्ण सिद्धि प्राप्त होने तक तुम कितने भी प्रयास करने से भी मैं पीछा नहीं छोड़ूँगा। श्री दत्त की यही विशेषता है। साधारण रूप में मैं (पर ब्रह्म)किसी की ज़िम्मेदारी नहीं लेता हूँ। एक बार मुझे पकड़ लिया ,बस तुम मुझे छोड़ने को कितने भी प्रयास करने से भी मैं छोड़ता नहीं हूँ। प्राप्त नहीं होता । अगर मिलता तो छोड़ता नहीं। यही दत्त तत्व है। मेरे वात्सल्य के सामने माता ,पिता और गुरु का वात्सल्य किसी काम का नहीं है। अतः श्रीदत्त को प्राप्तकरनेवाले धन्य है। उस का उद्धार होजाएगा।

72) मेरे नाम जप करने के बजाय सत्संग मूल्यवान है। उस के समान और कोई साधन नहीं है। ऋषी लोग इस तरह के सत्संग में सदा समय बिताते थे। अतः उन्हें पूर्ण सिद्धि प्राप्त हुई। अज्ञान माने एक विषय की जानकारी नहीं होना । अज्ञान अलग रूप से नहीं है। विषय की जानकारी मिलते ही ,न जानने का अज्ञान खतम होता है । अतएव ज्ञान आते ही अज्ञान अपने आप ही खतम हो जाता है। अतः सदा सत्संग के द्वारा सदा ज्ञान का अर्जन करो। अनंत अज्ञान को निकालना है तो अनंत ज्ञान का अर्जन करना है। उस तरह के अपार ज्ञान सागर ही गुरु है। वह गुरु मैं ही हूँ सत्यं ,ज्ञानं ,अनंतं ब्रह्मा है। । उस तरह के अनंत ज्ञानवान ही ब्रह्म(परब्रह्म) हैं । अतः उस तरह के सदा ज्ञान से अज्ञान का निवारण करके आचरण सिद्धि प्राप्त कर, मुझ पर करनेवाली भक्ति और सेवा से पूर्ण सिद्धि प्राप्त करोगे।

73) मेरी दया को प्राप्त करने के लिए तप करना चाहिए। तप माने मेरे लिए (परब्रह्म के लिए) तीव्र गति से प्रयास करना है । तप में धीरे धीरे खाना,जल और वायु को छोड़ना पड़ता है। इस प्रकार त्याग करना प्रयास के साथ होता है तो मर जाता है, सिद्धि प्राप्त नहीं होती है। अनायास रूप से होना चाहिए। जबरदस्ती या बल पूर्वक नहीं होना चाहिए। मेरी आराधना अप्रयत्न और भावयुक्त करना चाहिए। अतः भाव और भावोद्देग के बिना सिर्फ परंपरागत रूप में करनेवाली सारी क्रियाएँ व्यर्थ होती हैं जैसे गुलाब का पानी मिट्टी में मिलना।

74) भक्ति के स्तर के अनुसार पूजा होनी चाहिए। अगर भक्ति से बढ़कर पूजा करेगा तो वह अपने स्वार्थ के लिए पूजा कर रहा है, मुझ पर (भगवान पर) प्रेम के साथ नहीं। अगर भक्ति अणु मात्र ही रहा, पूजा घंटों करता है तो वह झूठी (असत्य) पूजा होगी। वह पूजा वेश्या जैसी होगी। जिस तरह वेश्या धन के लिए झूठे प्रेम को दिखाती है, वैसे ही यह पूजा भी होगी। वेश्या घंटों तक प्यार करती है तो मन में प्रेम रखकर नहीं करती है। तुम्हारे धन के लिए करती है। परंतु पत्नी ऐसा नहीं करती हैं। सच्चे रूप में ही प्यार करती है। अगर दिल में प्रेम भावना नहीं है तो उसे स्वीकार नहीं भी करती है। अतः स्वार्थ को त्याग करके निष्काम बन जाओ।

75) उपवास व्रत माने दुष्टाहार को छोड़ना है। किन्तु खाने को छोड़ना नहीं है। साधक व्यक्ति को इस तरह के उपवास व्रत ही करना है। इससे स्वास्थ्य तथा आयु के साथ सत्व गुण की वृद्धि भी होती है। तीव्र भक्ति में रहकर बिल्कुल आहार को छोड़ना ही सच्चे रूप में उपवास बनता है। इस के अलावा सिर्फ आहार को छोड़कर दिनभर अन्य लौकिक क्रिया कलाओं में डूब जाना उपवास व्रत नहीं है। आहार के साथ लौकिक क्रियाकलापों को भी सहज रूप में त्याग करना है। बल पूर्वक नहीं करना है। जब सच्ची भक्ति होगी तभी यह संभव होगा। भक्ति रस प्राप्त होते ही आनंद मिलता है। आनंद भी भगवान से सदा जुड़े रहने का लक्षण ही है।

76) साधक व्यक्ति ज्यादा हरी सब्जी खाने से तंदुरुस्त होकर साधना में सफलता प्राप्त करेगा। इसी प्रकार उसे जल्दी ही सिद्धी प्राप्त होगी। दुष्टाहार के कारण बीमारी हो जाती है। इसलिए उसे छोड़नेवाले साधक उत्तम साधक है। रजस और तमस आहार को छोड़कर सात्विक आहार को खाने से उप = भगवान का सान्निध्य, वास = निवास करता है (प्राप्त होता है), इस अर्थ के कारण ही उपवासी बन रहा है। इसी कारण से अरुंधती के द्वारा दिया गया सात्विक आहार खाकर ऋषि दुर्वास नित्य उपवासी बन गया। इसी प्रकार धर्म मार्ग में चलते हुए अपनी पत्नी से ही रमण करते हुए, दूसरी स्त्रियों को मातृ भावना के साथ देखनेवाले ऋषि वशिष्ठ सदा ब्रह्मचारी के रूप में रहा। अतः सात्विक आहार को लेना और एक पत्नीव्रत ये दोनों उपवासव्रत और ब्रह्मचर्य पालन करने का अर्थ है। इस लिए दुष्टाहार को ग्रहण करनेवाले वेश्या के संपर्क में रहनेवाले व्यभिचारी के समान है। यही ग्रहण करना चाहिए।

77) भजन में जो राग गाया जाता है, वह नहीं चाहिए। अनुराग (प्रेम) चाहिए, मुझे वेद नहीं निर्वेद (पहले किए हुए पापों का प्रायश्चित्त) चाहिए। पूरी साधना भाव पर ही आधारित है। एक पद्धति के द्वारा या एक प्रत्येक मार्ग के द्वारा मेरे पास पहुँचना मुश्किल है। एक समय या एक प्रदेश मेरे पास तक पहुँचने के लिए सहायक नहीं बनेंगे। मेरे पास पहुँचने के लिए कितने बार कहे तो भी एक ही मार्ग है, वह है भक्ति मार्ग। भक्ति प्रेम का स्वरूप है। उसे परीक्षाओं को सामना करके खड़े होना है। मेरी (परब्रह्म) परीक्षा अति सूक्ष्म रूप में होती है। चावल (अन्न) पका कि नहीं देखने के लिए एक ही दाने को पकड़कर देखने से समझ में आ जाता है कि पका या नहीं। ऐसी मेरी परीक्षा होगी।

78) मुझे समझने और देखने की इच्छा छोड़ दो। वह बड़े बड़े महान तपस्वी लोगों के लिए भी संभव नहीं हो सका। तुम्हें योग्यता प्राप्त होते ही देखोगे और प्राप्त करोगे। तब तक यह संभव नहीं है। अगर दर्शन मिला तो तुम जीवित नहीं रह पाओगे। उससे तुम्हारा साधन रुक जाएगा। मैं हमेशा तुम्हारे साथ हूँ। परंतु तुम देखने लायक माया के रूप में स्थित हूँ। धीरे धीरे अनुभूति का बल नहीं बढ़ेगा तो परमात्मा का साक्षात्कार नहीं प्राप्त होगा।

79) हे ! पगला जीव ! तुम इस जन्म के ही अनुराग (प्रेम) को समझ लोगे। परंतु तुम्हारे ऊपर कई करोड़ों जन्मों से आनेवाला अनुराग मुझे मालुम है। तुम पर मेरे जो अनुराग है उस की जानकारी मिलती तो तुम मति मार कर पागल बन जाओगे। इस लिए मेरे द्वारा पूर्व जन्मों के बारे में स्मरण नहीं रहने जैसे बनाया गया। जिससे तुम्हारी भलाई होगी, उसे तुम पूछे बिना मैं दे दूंगा।

80) मृत्यु का भय छोड़ दो। अब तक तुम ने कितने वस्त्र बदल दिए? उसी प्रकार मृत्यु द्वारा नए शरीरों को पाया। पुराने कपड़े को फेंककर नए कपड़े को पहननेवाले जिस तरह खुश होता है, वैसे ही मृत्यु के लिए भी खुश हो जाओ। मृत्यु के बाद मुक्ति भी मिलती है। अतः जन्म समय में दुखी हो जाओ और मृत्यु के समय में दुख को छोड़ दो।

81) इस शरीर पर अथवा इससे संबंधित वस्तुओं पर और व्यक्तियों के प्रति ममता नहीं छोड़ने के कारण मृत्यु से डर रहे हो। लेकिन उसमें डरने की कोई बात नहीं है। अब तक तुम कितने शरीर, कितने व्यक्ति, कितने वस्तु और कितने घरों में डुबकी लगाकर आए हो? वे सारे तुम्हारे हो चुके हैं क्या? वे सब लोग तुम्हारे सगे संबंधी बन गए हैं क्या? सिर्फ मैं ही तुम्हारा हूँ। अतः तुम सारे जन्मों में, तुम्हारे साथ रहनेवाले मेरे ऊपर सभी समयों में और सभी दशाओं में मेरे ऊपर दृष्टि रखो। अगर तुम वह दृष्टि मेरे ऊपर रखोगे तो मैं तुम्हें वादा करता हूँ कि मैं जरूर तुम्हें प्राप्त हो जाऊंगा। इस लिए शांति और प्रेम के साथ रहो। शांति के द्वारा ही योग की सिद्धि प्राप्त होगी।

82) साधन के द्वारा भगवान के पास पहुँचना एक क्रिया है। भगवान में ऐक्य होना ही योग है। क्रिया माने सृष्टि है। क्रिया के अतीत एकैक निष्क्रियवान है स्वामी। क्रिया माने कर्म है क्रिया योग ही कर्म योग है।

83) मनसा,वाचा कर्मणा जीव प्रेम भावना के साथ रहना ही मधुमति है।

मेरी कृपा प्राप्त करनेवाले जीव मधुमति का रूप है। उस तरह के जीव मेरी सेवा करनेवाली वाणी है। वाक से गाना गाती है। लक्ष्मी -द्रव्य शरीर रूपी चेष्टायुक्त (कर्म)हाथों से पैर दबाती है। पार्वती -भाव मनो रूपों के साथ तप करती है। इस प्रकार वे मेरी दासी है। मैं ने उन्हें कुछ अधिकार दिया। वहीं उनके द्वारा प्रदान की जानेवाले लौकिक वरदान हैं । मेरी दासी द्वारा देने पर भी पीछे देनेवाला मैं ही हूँ।

84) मैं सर्व व्यापक हूँ। सभी का सहारा हूँ। हर जगह सारी शक्तियों से युक्त हूँ। जैसे एक प्रदेश, एक काल की कोई विशेषता नहीं है। भगवान को प्रसन्न करना ही (मुख्य)अंतिम लक्ष्य है। लेकिन यह मालूम होना चाहिए कि सभी प्रदेश और काल समान है। छोटे छोटे लौकिक विषयों से भी बढ़कर विशिष्ट आध्यात्मिकता में देता हूँ। अतः सच में ऐहिक और आध्यात्मिक फलदाता मैं ही मैं ही अकेला हूँ।

85) सारे जीव प्रकृति का ही स्वरूप हैं। अतः स्त्री रूप ही ग्रहण करके भर्ता(जीव) के रूप में अहंकार को छोड़कर यह पहचानना है कि सभी जनों के भर्ता स्वामी ही है । जब यह पहचान होगा तब स्वामी के बारे में इस तरह नहीं सोचता है कि यथार्थ रूप में कल्याण (विवाह करना) करना या पारंपरिक रूप में सारी वैवाहिक क्रियाओं के साथ विवाह संपन्न किया गया है। यह सोचनेवाले अज्ञानी है।

86) जब तुम को मेरे ऊपर(भगवानके ऊपर)प्रेम भावना होती है तब किसी भी समय हो ,कोई भी प्रदेश हो अपनी चेष्टाओं और बातों से प्रेम व्यक्त करना सच्ची आराधना है। सोचते हैं कि एक दिन तुम से आराधना करना नहीं हुआ । अगर एक दिन पूजा नहीं हुई तो क्यों चिंता करनी है?तुम अपने बच्चों पर ,पत्नी पर या पति पर जिस तरह सहज प्रेम को देश काल नियमों के परे व्यक्त कर रहे हो ,वैसे हो मेरे ऊपर भी देश काल नियमों के बंधनों के बिना प्रेम करो। वहीं सच्चा प्रेम है। तुम्हारी सच्ची समर्पण भावना और सच्चा प्रेम मुझे समर्पित करना काफी है। तुम्हारे मन में स्थित मैं तुम्हारे साथ रहकर ,तुम्हारे पूरे शरीर पर फैला रहूँगा। तुम जैसे बनूँगा।

87) बिना इच्छा के निष्काम रूप से,लोग मेरी आराधना को देखना है जैसे आडंबर को छोड़कर एकांत प्रदेश में जो भक्त मेरी (भगवान की) आराधना करता है,वहाँ स्वामी विशेष रूप से उपास्थि रहते हैं। मैं स्पष्ट और निश्चित रूप से कहता हूँ कि जहां निष्काम और एकांत है , वही सच्चे रूप में पुण्य क्षेत्र है। अतः निष्काम बन जाओ । सिर्फ भगवान के प्रति कामुक होकर एकांत प्रदेश में जाकर मेरी आराधना करो। इस का अर्थ है घर छोड़कर जंगल जाने का नहीं है। तुम्हारी पूजा गृह में ही एकांत और निष्काम रूप में मेरी आराधना करो। वही सच्चे रूप में पुण्य क्षेत्र है। सच्ची में तीर्थ यात्रा है। परब्रह्म के बारे में जाननेवाले ज्ञानार्जन ही सर्व श्रेष्ठ है।

88) आध्यात्मिक साधना और जीवन विधान ये दोनों अलग अलग नहीं हैं । ये जीवन ही साधना है। आप अपने जीवन को स्वार्थ रहित निष्काम प्रेम से भर दीजिए। उस प्रेम में घृणा क्रोध ,जलन और अहंकार जैसे विष बिन्दुओं से सुरक्षित रखना चाहिए। दैवत्व एक क्षण में मिलता है। जीवन को सत्व गुण मय बना दो। जब वह प्राप्त होता है तब आप का आध्यात्मिक साधन एक ही क्षण में खतम होता है। इस रहस्य को ग्रहण किए बिना कितनी भी पूजाएं करने से भी ,कितने ही भजन गाने से भी और कितने ही ग्रंथों का पठन करने से भी वे सारे व्यर्थ हैं । यह मैं बल देकर बोल रहा हूँ।

89) संभूति उपासना माने द्रव्य (धन से) उपासना करना है। मानसिक रूप से नहीं । असंभूति उपासना माने मानसिक उपासना करना है। द्रव्य से नहीं। इन दोनों को मिला कर उपासना करोगे तो सिद्धि प्राप्त होगी।

90) श्री दत्त से बढ़कर और कोई देवता नहीं है। दैव कृपा (प्रभु का प्रेम)प्राप्त करने के अलावा और कोई साधन नहीं है। इस जगत की सृष्टि ,स्थिति और लय करनेवाले एक ही हैं । ब्रह्म ,विष्णु और महेश्वर नाम क्रिया नाम ही हैं । परंतु मूर्तियां नहीं है। ये तीनों नाम मेरा ही हैं। अतः दत्त से बढ़कर और कोई देवता नहीं हैं।

91) भूतकाल के बारे में मत सोचो। भविष्य के बारे में कल्पना मत करो। यह क्षण तुम्हारा है। अभी से समाय और शक्ति को व्यर्थ मत करो। हमेशा मेरी आराधना में ही रहो। उद्धार हो जाओगे।

92) एक क्षेत्र का दर्शन करने के बावजूद भी अनेक क्षेत्रों का दर्शन करनेवाले अल्प विश्वासी है। क्षेत्र से भी बढ़कर अपने घर में पूजा करनेवाले अधिक विश्वासी है। अपने घर के बाहर जहां भी रहो सदा अपने मन में आराधना करनेवाले पूर्ण विश्वासी है।

93) तुम निष्काम बनकर एक एकांत प्रदेश में मेरी आराधना करोगे तो वह प्रदेश ही सच्चे रूप में पुण्य क्षेत्र है । अगर इस तरह एकांत प्रदेश न मिला तो कम भीड़वाले तुम्हारे घर की पूजा गृह में निष्काम बनकर मेरी आराधना करो। जिस घर में तुम घूमते रहते हो वहीं सच्चे रूप में पुण्य क्षेत्र है।

94) सच कहा जाए तो आज 84 करोड़ जीवों में मानव से बढ़कर कोई अधम जानवर नहीं है। जानवर को उस समय तक (उस क्षण तक )खाना चाहिए। पेट भरते ही संतुष्ट होजाएगा । परंतु मानव आगे दस पीढ़ी तक धन का अर्जन करने के बावजूद भी लौकिक चीजों को छोड़े बिना और धनार्जन के लिए मुझे (भगवान को)पीड़ित कर रहा है।

95) राधा को देखो! मेरे लिए कितना तड़परही थी,उसे स्मरण करते हैं तो मुझे भी (स्वामी को भी) आश्चर्य लगता है । राधा ने ही प्रेम की असली औन्नत्य को दिखाई है ना ! इस लिए राधा को मैं अपने से भी बढ़कर और अलग विशिष्ट स्थान देकर उसके चरण दास बनगया हूँ । महक्काली के चरणों के (पैरों के) नीचे रहनेवाले परमेश्वर (ईश्वर)का अंतरार्थ यही है। इसे समझे बिना कुछ तमोगुणवाले मूर्ख व्यक्ति यही सोचते हैं कि शक्ति महेश्वर को हराकर उसे कुचल रही है। अंतरार्थ की जानकारी नहीं है तो हर चीज को अनर्थ के रूप में ही लेते हैं।

96) मैं ही ब्रह्म हूँ। परब्रह्म भी मैं ही हूँ। परात्पर ब्रह्म भी मैं ही हूँ। मुझे पहुँचने के बाद और कोई लक्ष्य (पहुँचनेवाली जगह) नहीं रहता है। सृष्टि का निर्माण (सृष्टि कर्ता), सृष्टि का भरण और पालन (सृष्टि भर्ता)और सृष्टि का हरण (सृष्टि हर्ता)करनेवाला मैं ही हूँ। मेरे ऊपर ही स्थिर बुद्धि (दृष्टि)रखो। दूसरी ओर मत देखो। मुझे जाननेवाले कोई भी दूसरे को नहीं देखता है। सभी अंतिम लक्ष्यों का अंतिम लक्ष्य मैं ही हूँ। आंखों के सामने जो माया के परदे हैं उन्हें हटाओ तथा देखकर मुझे पहचान लो।

97) वहाँ परलोक में कोई जीव भी तुम्हें पहचानेगा नहीं। इसे भूलना नहीं। पत्नी, पुत्र और ये सारी संपत्ति ,यह शरीर ये पद सारे क्षण भंगुर ,अनित्य और असत्य हैं। इसे मत भूलना है।सत्य का अन्वेषण करो। उद्धार हो जाओगे।

98) यह शरीर एक फैक्ट्री जैसा है। इस में खाने (जैसे कच्चेमाल को ) को डालते हैं तो वह शक्ति के रूप में बदलता है। इस से (शक्ति)उस फैक्ट्री में काम करनेवाले कारगर अपने वेतन के रूप में कुछ शक्ति (लाभ रूपी धन) को लेते हैं। ये कारगर हैं दिल ,फेफड़े ,पेट आदि शरीर अवयव। उस के बाद कुछ शक्ति को खाना कमाने के लिए विनिमय करना है। अर्थात् कुछ शक्ति (धन) को कच्चा माल खरीदने में उपयोग करना है। यह गलत नहीं है । अतः खाना और कपड़े कमाने में जो कर्म करते हैं ,वह गलत नहीं है ।परंतु बची हुई कमाई को अनावश्यक रूप में खर्च न करते हुए उस फैक्ट्री के यजमान (मुखिया को) को लाभ के रूप में समर्पित करना है। उसी प्रकार बची हुई पूरी शक्ति को माने शरीर के अंगों की क्रियाओं के लिए और रोटी कमाने के लिए जितना खर्च करते हैं , उसे छोड़कर बाकी शक्ति को भगवान (इस शरीर रूपी फैक्ट्री का यजमान) की आराधना में खर्च करो। इस शरीर का निर्माण करनेवाले और चलानेवाले मालिक मैं (परमात्मा) ही हूँ ना !

99) अंतिम बात बोल रहा हूँ कि आराधना कामना के लिए नहीं मेरे लिए करना है। कामनाओं पर ध्यान नहीं होना चाहिए। तुम्हें जो चाहिए ,वह तुम पूछे बिना मैं (भगवान) दे देता हूँ। अतः निस्वार्थ तथा निष्काम रूप से एकांत में अंतर्मुख होकर हमेशा मेरी आराधना करो।

प्रेम को साद लो। मेरी आराधना, मेरे बारे में ज्यादा याद करना ,सत्संग करना और मेरे बारे में वर्णित ग्रन्थों का पठन करोगे तो मेरे ऊपर प्रेम भावना की वृद्धि होगी। इस प्रकार प्रेम को वृद्धि करने के पहले सर्व जीवों पर प्रेम प्रकट करके अभ्यास करना है। जीवों पर दिखानेवाले प्रेम अंत में सांसारिक बंधन नहीं बनना चाहिए। हिरण की बच्ची पर ममता को बढ़ाने के कारण राजा भरत का पातन हो गया ना। पंचभूतों से अलग रहनेवाला (भगवान) मुझे पंचभूतों की सृष्टि के अंतर्गत सोचकर भ्रमित नहीं होना चाहिए। मुझे (भगवान को ) जो जानना और देखना चाहते हैं तो कामनाओं को छोड़ दो। वह बड़े बड़े तपस्वी को भी साध्य नहीं हुआ। तुम्हें योग्यता प्राप्त होते ही मुझे देख पाओगे , प्राप्त करोगे ,तब तक यह संभव नहीं है। अगर तुम मुझे योग्यता प्राप्त करने के पहले ही देखते हो तो तुम सह नहीं पाओगे । फिर भी दर्शन हुआ तो भी तुम मिट जाओगे। उससे करनेवाली साधना रूक जाएगी। मैं हमेशा तुम्हारे साथ ही रहता हूँ।

100) लेकिन तुम जिस माया रूप को देख पाओगे उसी रूप में हूँ। क्रमशः अनुभूति बढ़ती है तो परमात्मा का साक्षात्कार प्राप्त होगा। तुम्हें जो चाहिए वह मुझे (भगवान को) मालुम है। तुम्हें जो चाहिए वह खुद को (तुम्हें) मालुम नहीं है। हे पागल जीव ! तुम को इस अकेले जन्म के प्रेम (अनुराग) के बारे में जानकारी है। परंतु अनेक करोड़ों जन्मों से जो प्रेम भावना है उसे मैं जानता हूँ। अगर तुम्हें मेरे प्रेम के बारे में जानकारी मिलेगी तो तुम माती मार कर भ्रष्ट हो जाओगे। इस लिए पूर्व जन्म की जानकारी याद न होने का वरदान दिया गया। जिससे तुम्हारी भलाई है ,वह तुम पूछे बिना दे देता हूँ। मृत्यु के बारे में डर छोड़ दो। अब तक तुम कितनी वस्त्रों को बदल चुके हो ? उसी प्रकार मृत्यु द्वारा नए जन्म को प्राप्त करोगे। उदाहरण के लिए पुराने कपड़े फेंककर नए कपड़े को ग्रहण करनेवाले खुश होते हैं । उसी प्रकार मृत्यु के लिए भी खुश हो जाओ। मृत्यु के उपरांत मुक्ति भी प्राप्त हो सकता है। अतः जन्म लेते समय रोना चाहिए। परंतु मृत्यु के समय रोना नहीं चाहिए। इस शरीर पर और इससे संबंधित वस्तुओं पर ममता छोड़ नहीं पाने के कारण मृत्यु से डर रहे हो। लेकिन उस में डरनेवाली कोई बात नहीं है। अभी तक तुम कितने शरीरों को, कितने व्यक्तियों को, कितने वस्तुओं से गुजरते हुए आए हो तथा कितने घरों में रहकर आए हो ? वे सभी तुम्हारे हो गए हैं क्या? वे सभी लोग तुम्हारे सगे संबंधी बन गए हैं क्या ? अच्छी तरह याद रख लो कि सिर्फ मैं अकेला ही तुम्हारा हूँ। अतः सभी जन्मों में तुम्हारे साथ रहनेवाले मेरे ऊपर, सभी कालों और अवस्थाओं में दृष्टि रखो। उस दृष्टि को एक क्षण भी इधर-उधर विचलित मत रखो। एक क्षण विचलित हो गया तो मेरे ऊपर दृष्टि रख नहीं सकते। माया खींच लेगी। तुम्हारा मन और तुम्हारी भावना मुझे समर्पित करो। तुम्हारी दृष्टि सदा मेरे ऊपर रखोगे तो मैं अवश्य तुम्हें प्राप्त हो जाऊंगा। यह मैं दावे के साथ कह रहा हूँ।

इस प्रकार श्री दत्त भगवान ने संदेश दिया।

ॐ तत सत